

भीष्म साहनी के साहित्य में सामाजिक संवेदना

Bheeshm Saahni Ke Sahitya Me Samajik Samvedana

*Dr.Babitha.

B.M. Associate Professor and HOD of Hindi, S S M R V College, Bangalore.

भूमिका:-

हिन्दी उपन्यासकारों में प्रेमचंद के बाद गहरी सामाजिक चेतना से युक्त उपन्यासकारों में भीष्म साहनी का नाम अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनके उपन्यासों में निहित सामाजिकता का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष एक गैर-सांप्रदायिक सामाजिक दृष्टिकोण की खोज है। अपने उपन्यास 'झरोखे', 'तमस' और 'नीलू नीलिमा नीलोफर' में वे एक गंभीर रचनात्मक विमर्श के साथ ऐसा करते दिखाई देते हैं। 'तमस' में भारतीय परिप्रेक्ष्य में सांप्रदायिकता से जुड़े विभिन्न पहलुओं; सत्ता एवं राजनीति द्वारा धर्म का अपने स्वार्थ के लिये इस्तेमाल, सभी धर्मों में निहित सांप्रदायिक मानसिकता का समान चरित्र, धर्माधता और कट्टरता का पीढ़ी-दर-पीढ़ी संक्रमण, सांप्रदायिकता का सर्वाधिक शिकार निम्न वर्ग के लोगों का होना आदि, का उद्घाटन हुआ है।

भीष्म साहनी जी के उपन्यासों में सामाजिक चेतना से हमारा तात्पर्य किसी देश एवं काल से संबंधित मानव समाज में परिवर्तनशील जागृति ले आना। साहित्य मानव संस्कृति का एक अभिन्न अंग है। अतः साहित्य सामाजिक चेतना का भी एक अनिवार्य तत्व है। भीष्म साहनी के उपन्यासों में 'सामाजिक चेतना' शब्द समाविष्ट है, इसलिए हमें सर्वप्रथम 'समाज' और 'चेतना' शब्द समझना चाहिए। समाज को हम सभा, संघ, समूह, दल आदि का पर्याय कहते हैं तथा अंग्रेजी में सोसायटी नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। 'चेतना' शब्द बड़ा ही प्रसिद्ध है। चेतना शब्द का अर्थ होता है, ज्ञानमूलक मनोवृत्ति, वृद्धि, समझ। भीष्म साहनी के उपन्यासों में सामाजिक चेतना जब एक विशेष आदर्शों से प्रभावित होती है और उनके उपन्यासों के द्वारा लोगों में उस आदर्श के कारण एक नवजागरण पैदा होता है, तभी सामाजिक जागरूकता संभव है।

भीष्म साहनी के साहित्यिक क्षेत्र को प्रगतिशील लेखन परंपरा से जोड़कर देखा जा सकता है। जिस प्रकार का उनका साहित्यिक क्षेत्र है, उससे यह साफतौर पर प्रतीत होता है कि वह प्रेमचंद और यशपाल की तरह प्रगतिशील परंपरा के उत्तराधिकारी के रूप में देखे जा सकते हैं। भीष्म साहनी के साहित्य में सामाजिक चेतना सिर्फ उतना नहीं आयी है, जितना समाज की तल पर उतरी हुयी, समस्याओं के रूप में सामने आता है, बल्कि उसका वह संघर्ष कहीं अधिक समाज में सत्य के रूप में ऊपर उठा है।

निःसन्देह साहित्यकार परिस्थिति एवं परिवेश की उपज होता है। भीष्म साहनी जी इसी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे। अपने लेखन के द्वारा उन्होंने समाज में व्याप्त सामाजिक विषमताएँ, सांस्कृतिक विभेद, साम्प्रदायिकता, धर्माडम्बर आदि पर अपनी पैनी दृष्टि डाली है। "भीष्म साहनी ने साम्प्रदायिक उन्माद का सजीव चित्रण करने के साथ-साथ उन स्थितियों और कारणों के विश्लेषण तथा अंकन का अधिक प्रयत्न किया है, जो देश-विभाजन और साम्प्रदायिकता के मूल में थे।"1

भीष्म साहनी जी समाज में विद्यमान अशिक्षा, नारी की असहाय स्थिति साम्प्रदायिकता एक विकार, वासनात्मकता, विद्रोह का भाव, जनसंख्या विस्फोट, स्त्री-पुरुष असमानता, शोषण के खिलाफ आवाज उठाई तथा समाज में साम्प्रदायिकता और विभाजन की मार्मिक घटना को समाज के सामने रखा। अत्याचार के खिलाफ आवाज बुलंद करने के अपने रास्ते से कभी हटे नहीं, चाहे वह उनके घर का आर्य समाजी वातावरण रहा हो या देश-विभाजन की पीड़ा। भीष्म साहनी इन सभी को अपने कथा साहित्य में उकेरा है। इसके साथ ही अपने समय के महत्वपूर्ण मुद्दों को पृथ्वीतल पर देखने समझने का कार्य भी किया।

हिन्दी उपन्यासकारों में प्रेमचंद के बाद गहरी सामाजिक चेतना से युक्त उपन्यासकारों में भीष्म साहनी का नाम अत्यंत महत्वपूर्ण है, भीष्म साहनी जी अपने उपन्यासों में भारतीय समाज में स्त्री की पराधीनता जैसी समस्या का चित्रण किया है। उपन्यास के बारे में प्रेमचन्द ने भी अपना मत व्यक्त किया है- "मैं उपन्यास को मानव-जीवन का चित्र मात्र समझता हूँ, मानव जीवन पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व माना है।"²

उपन्यास लेखन के क्षेत्र में भीष्म साहनी जी का अद्वितीय स्थान है। भीष्म साहनी जी ने कुल सात उपन्यासों को लिखे हैं, जो इस प्रकार हैं:- 'झरोखे' (1967), 'कड़ियाँ' (1970), 'तमस' (1973), 'बसंती' (1980), 'मय्यादास की माड़ी' (1988), 'कुंतो' (1993), 'नीलू, नीलिमा, नीलोफर' (2000) आदि उपन्यासों के माध्यम से भीष्म साहनी जी भारतीय समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार की समस्याओं को उठाया है।

साहनी के इस उपन्यास के द्वारा जागरूकता का यह पुट देखने को मिलता है। भीष्म साहनी के उपन्यासों में 'कड़ियाँ' दूसरे क्रम का सामाजिक और पारिवारिक उपन्यास है। यह उपन्यास पति, पत्नी और प्रेमिका के अंतःसम्बन्धों को लेकर लिखा गया है। हमारे समाज में मानवीय संबंधों के रिश्तों में जागरूकता के अभाव में किस प्रकार से दरार पैदा होती है, यह इस उपन्यास के दृष्टिकोण से भीष्म साहनी जी ने समाज के सम्मुख प्रकट किया है। भीष्म साहनी जी अपने उपन्यास में सामाजिक नैतिक विसंगतियों, मध्यवर्ग के दोहरे मानदंडों, परिवार व विवाह संस्थाओं के विरोधाभासों को निशाना बनाया है। कड़ियाँ भीष्म साहनी जी का महत्त्वपूर्ण उपन्यास है। इसकी कथा एक मध्यवर्गीय परिवार से सम्बन्ध रखती है, जो हमारे परंपरागत संस्कारों से जकड़ा हुआ है। लेकिन इसकी मुख्य कथा दाम्पत्य जीवन की कड़वाहट और स्त्री की असहाय स्थिति से सम्बन्धित है, एक तरफ रूढ़ नैतिक मान्यताएँ हैं, जो पति-पत्नी के सम्बन्धों में दरार पैदा करती हैं और दूसरी तरफ पत्नी की आर्थिक स्थिति पर निर्भरता है, जिसके कारण उसे अनेक मानसिक यंत्रणाओं से गुजरना पड़ता है। पुरुष प्रधान समाज में स्त्री के हिस्से आने वाली पीड़ाओं और अत्याचारों का अंकन इस उपन्यास में बहुत बारीकी से किया गया है, तनाव और विघटन के क्षणों का चित्रण लेखक ने बड़ी सावधानी पूर्वक किया है।

'तमस' उपन्यास भीष्म साहनी जी का चर्चित उपन्यास की शृंखला में अग्रगण्य है। उपन्यास में आजादी के ठीक पहले का पंजाब और साम्प्रदायिकता के भय से अंधेरे में डूबे वे चंद दिन धार्मिक जड़ता को इस्तेमाल करती पूंजीपरस्त राजनीति और उससे रक्त-रंजित हजारों बेकसूर लोग सूअर और गाय बचा लेने का पुष्प और उसी के लिये होती हुयी मनुष्य की हत्याएँ इस दंगे फसाद के पीछे खतरनाक मस्तिष्क यह एक वातावरण है, जिसे भीष्म साहनी के 'तमस' में इतिहास बोध के साथ प्रस्तुत किया है। 'तमस' उपन्यास में भीष्म साहनी जी ने साम्प्रदायिकता की समस्या को उठाया है। सांप्रदायिकता उस राजनीति को कहा जाता है, जो धार्मिक समुदाय के बीच विरोध और झगड़े पैदा करती है। आपसी मत

को सम्मान देने के बजाय विरोधाभास का उत्पन्न होना अथवा ऐसी समस्या का उत्पन्न होना, जिससे व्यक्ति किसी दूसरे धर्म के विरोध में अपना वक्तव्य प्रस्तुत कर सके। तमस उपन्यास के माध्यम से भारतीय समाज के मनोजगत् में व्याप्त धार्मिक रूढ़ता और उसकी जड़ता की कलाई बड़े धैर्य और तटस्थता के साथ उकेरी गयी है। राजेश्वर सक्सेना के शब्दों में- "तमस में राजनीति और धर्म के अंतर्विरोध को स्पष्ट किया गया है। धर्म स्वतः स्फूर्त उन्माद में फलता-फूलता है। राजनीति सामाजिक चेतना के विकास से पैदा होती है, यह चेतना परिस्थिति और परिवेश सापेक्ष होती है।"4 सामाजिक न्याय का ज्ञान कराते हुये ये उपन्यास नव-निर्माण की प्रेरणा पाकर ही पूँजीवादी व्यवस्था और सामाजिक असंगतियों के विरुद्ध क्रांति का आह्वान करते हैं।

भीष्म साहनी की उपन्याय यात्रा में 'बसंती' का क्रम चौथा है। बसंती पिछले तीन उपन्यासों से भिन्न है। अपितु यह कहा जाये कि इन उपन्यासों की विकास की अगली कड़ी है। बसंती उपन्यास के माध्यम से भीष्म जी अपने दृष्टिकोण और कलात्मक कौशल के प्रति एक नया विश्वास पैदा किया है। बसंती भीष्म साहनी जी का एक सामाजिक उपन्यास है। जो मानवीय संबंधों के जुड़ते-टूटते रिश्तों का सूक्ष्म अंकन करता है। बसंती उपन्यास की मुख्य नायिका उस वर्ग की प्रतीक है, जो गाँव में पैदा होकर रोजगार की तलाश में निकले माँ-बाप के साथ महानगरों के फुटपाथों, पार्कों, खोलियों और झुग्गी-झोपड़ियों में पलकर बड़ी होती है। राजनीति इस उपन्यास का विषय नहीं, लेकिन जन-जीवन पर पड़ने वाले उसके प्रभावों को इसमें गहराई तक महसूस किया गया है और यह इसकी एक बहुत सृजनात्मक उपलब्धि है। भीष्म साहनी के उपन्यास में सामाजिक जागरूकता 'बसंती' उपन्यास की नायिका के द्वारा यहाँ द्रष्टव्य है- "भीष्म जी की नारी पात्र बसंती भी दीनू का गर्भ नहीं गिराती। परिवार और समाज दोनों के विरोध को झेलती है।"5 अतः कहा जा सकता है कि उसके अन्दर सामाजिक चेतना का विकास हो चुका है।

'मय्यादास की माड़ी' उपन्यास के लिए भीष्म साहनी को 1990 में हिन्दी अकादमी दिल्ली से पुरस्कार प्राप्त हुआ है। यह भीष्म साहनी की एक सफल कृति है। इस उपन्यास में पंजाब की धरती पर जब खालसा दरबार के पाँव उखड़ चुके थे और अंग्रेजों की शक्ति अपना पाँव जमाने में ताबड़-तोड़ कोशिश कर रही थी, का वातावरण पूरी तरह से मुखरित हो उठता है, भारतीय इतिहास के इस अहम बदलाव को भीष्म जी ने एक कस्बाई कथा भूमि पर चित्रित किया है और कुछ इस कौशल से कि हम जन-जीवन के ठीक बीचों-बीच जा पहुँचते हैं। झरते हुये पुरातन के बीच लोग एक नये युग की आहट सुनते हैं, उस पर बहस-मुबाहसा करते हैं और चाहे-अनचाहे बदलते चले जाते हैं, उनकी अपनी निष्ठाओं, कद्रों, कीमतों और परंपराओं पर एक नया रंग चढ़ने लगता है। इस सबके केन्द्र में है दीवान मैय्यादास की माड़ी, जो हमारे समाने एक शताब्दी पहले की सामन्ती अमलदारी उसके सड़े-गले जीवन मूल्य और हास्यस्पद हो गये, ठाट-बाट के एक अविस्मरणीय ऐतिहासिक प्रतीक में बदल जाती है, इस माड़ी के साथ दीवानों की अनेक पीढ़ियाँ और अनेक ऐसे चरित्र जुड़े हुये हैं, जो अपने-अपने सीमित दायरों में घूमते हुये भी विशेष अर्थ रखते हैं। वस्तुतः भीष्म साहनी जी का यह उपन्यास एक हवेली अथवा एक कस्बे की कहानी होकर भी बहते काल प्रवाह और बदलते परिवेश की दृष्टि से समूचे युग को समेटे हुये हैं और रचनात्मकता में एक नयी ऊँचाई देता है।

'कुंतो' भीष्म साहनी का यह उपन्यास एक ऐसे कालखंड की कहानी कहता है, जब लगने लगा था कि हम इतिहास के किसी निर्णायक मोड़ पर खड़े हैं, जब करवटें लेती जिंदगी एक दिशा विशेष की ओर बढ़ती जान पड़ने लगी थी। आपसी रिश्ते, सामाजिक सरोकार, घटना प्रवाह के उतार-चढ़ाव उपन्यास के विस्तृत फलक पर उसी कालखंड के जीवन का चित्र

प्रस्तुत करते हैं। केन्द्र में जयदेव-कुंतो, सुषमा-गिरीश के आपसी संबंध हैं- अपनी उत्कट भावनाओं और आशाओं, अपेक्षाओं को लिये हुये, लेकिन कुंतो-जयदेव और सुषमा-गिरीश के अंतर्संबंधों के आस-पास जीवन के अनेक अन्य प्रसंग और पात्र उभरकर आते हैं। इनमें हैं एक प्रोफेसर साहब जो एक संतुलित जीवन को आदर्श मानते हैं और इसी 'सुनहरी' के अनुरूप जीवन ढालने की सीख देते हैं।

नीलू, नीलिमा, नीलोफर उपन्यास में लेखक ने मजहब के नाम पर मानवीय प्रेम के दमन की कहानी को प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास के माध्यम से भीष्म साहनी जी समाज में धर्म के नाम पर जागरूकता लाने का जो प्रयास किये है, वह अत्यन्त सराहनीय कार्य है। इस उपन्यास में मजहबी उन्माद इतना ज्यादा है की व्यक्ति इसके पीछे अपनी बेटी की जिन्दगी को दांव पर लगाने से भी पीछे नहीं हटता।

उपर्युक्त विवेचन से यह बात सामने आती है कि भीष्म जी ने अपने उपन्यास के माध्यम से सामाजिक चेतना को पूरी विश्वसनीयता के साथ सकारात्मक रूप दिया है। उन्होंने समाज में अशिक्षा-परिणाम और निदान, प्रेम-वैध और अवैध, नारी की असहाय स्थिति, राष्ट्रीय स्वाधीनता के बनते-बिगड़ते चेहरे आदि में जागरूकता लाने का प्रयास किया है। अपने समय को वे अपने कथा साहित्य में बखूबी अभिव्यक्त करने में वे सफल रहे हैं। यही उनके उपन्यासकार होने की महत्वपूर्ण सफलता है।

निष्कर्ष

भीष्म साहनी ने अपने उपन्यासों में भारतीय समाज में स्त्री की पराधीनता जैसी समस्या को भी चित्रित किया है। 'कड़ियाँ' उपन्यास में प्रमिला के माध्यम से उन्होंने नारी की विडंबनापूर्ण स्थिति के साथ उसके भीतर से प्रकट होती एक संघर्षशील नई नारी की भी पहचान की है। भीष्म साहनी के उपन्यासों में निम्न मध्यवर्गीय जीवन के संघर्षों एवं त्रासदियों का भी चित्रण हुआ है।

कुल मिलाकर भीष्म साहनी अपने उपन्यासों में यह लक्ष्य लेकर चले हैं कि इतिहास, संस्कृति एवं मूल्यों के यथास्थितिवादी भ्रमों से मुक्त तभी हुआ जा सकता है जब मुनष्य को सामाजिक विकास के यथार्थवादी दृष्टिकोण से परिचित कराए जाए।

संदर्भ ग्रंथ:-

- गोपाल राय: हिन्दी उपन्यास का इतिहास, प्रथम आवृत्ति 2009, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं0 303.
- प्रेमचन्द: कुछ विचार, विशिष्ट सं0 संस्करण, 1982, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, पृष्ठ 47.
- भीष्म साहनी: झरोखे, सातवाँ संस्करण 2016, राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, पृष्ठ सं0 46.
- विवेक द्विवेदी: भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य, द्वितीय संस्करण 2009, वाणी प्रकाश, नयी दिल्ली, पृ0सं0 353.
- विवेक द्विवेदी: भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य, द्वितीय सं0 2009, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ0सं0 333